'सुनो, चन्दर, लगता है अब कुछ होगा नहीं। मैं मन से बड़ी असमर्थ हो गई हूँ। कुछ भी स्वीकार करने की सामर्थ्य ही नहीं रही है...'

'सब-कुछ एक बार कह डालो, सुदर्शना...'

'यही तो मुमकिन नहीं है। कौन है ऐसा, जिससे अपना सब-कुछ कह डाला हो। दस बातें हैं, जो सिर्फ मेरी हैं, तुम्हें उनमें से शायद तीन ही बता पाऊँगी, बाकी नहीं; कोई और मिलेगा, उसे शायद चार बता पाऊँ...किसी और को शायद एक और बता दूँ, पर ऐसा तो कोई नहीं, जिसे सब-कुछ बताया जा सके। जो बताने से बच जाता है, वही बहुत अकेला कर जाता है...नितान्त अकेलापन भर जाता है चारों तरफ। उसकी यही मजबूरी है, चन्दर !' कहते हुए उसने हाथ पकड़ लिया था। उसकी पसीजी हुई उँगलियाँ थरथरा रही थीं। फिर बोली थी, 'खत लिखूँगी तुम्हें, पर और कुछ मत समझना।'

मैं चला आया था। वह प्लेटफॉर्म के अँधेरे में धीरे-धीरे डूब गई थी...

कुछ दिन पहले उसका एक लिफाफा आया था—ऊपर लिखा हुआ पता उसी की लिखावट में था और मुहर भी उसी के शहर की थी। लिफाफे के भीतर सिर्फ एक अनलिखा कागज था...जिसमें मोड़ के निशानों के अलावा कुछ भी नहीं था।

(दिल्ली, 1963)

दिल्ली में एक मौत

चारों तरफ कुहरा छाया हुआ है। सुबह के नौ बज चुके हैं, लेकिन पूरी दिल्ली धुंध में लिपटी हुई है। सड़कें नम हैं। पेड़ भीगे हुए हैं। कुछ भी साफ नहीं दिखाई देता। जिन्दगी की हलचल का पता आवाजों से लग रहा है। ये आवाजें कानों में बस गई हैं। घर के हर हिस्से से आवाजें आ रही हैं। वासवानी के नौकर ने रोज की तरह स्टोव जला लिया है, उसकी सनसनाहट दीवार के पार से आ रही है। बगल वाले कमरे में अतुल मवानी जूते पर पॉलिश कर रहा है...ऊपर सरदारजी मूँछों पर फिक्सो लगा रहे हैं...उनकी खिड़की के परदे के पार जलता हुआ बल्ब बड़े मोती की तरह चमक रहा है। सब दरवाजे बन्द हैं, सब खिड़कियों पर परदे हैं, लेकिन हर हिस्से में जिन्दगी की खनक है। तिमंजिले पर वासवानी ने बाथरूम का दरवाजा बन्द किया है और पाइप खोल दिया है...

कुहरे में बसें दौड़ रही हैं। जूँ-जूँ करते भारी टायरों की आवाजें दूर से नजदीक आती हैं और फिर दूर होती जाती हैं। मोटर-रिक्शे बेतहाशा भागे चले जा रहे हैं। टैक्सी का मीटर अभी किसी ने डाउन किया है। पड़ोस के डॉक्टर के यहाँ फोन की घण्टी बज रही है और पिछवाड़े गली से गुजरती हुई कुछ लड़कियाँ सुबह की शिफ्ट पर जा रही हैं।

सख्त सर्दी है। सड़कें ठिठुरी हुई हैं और कोहरे के बादलों को चीरती हुई कारें और बसें हॉर्न बजाती हुई भाग रही हैं। सड़कों और पटरियों पर भीड़ है, पर कुहरे में लिपटा हुआ हर आदमी भटकती हुई रूह की तरह लग रहा है।

वे रूहें चुपचाप धुंध के समुद्र में बढ़ती जा रही हैं...बसों में भीड़ है। लोग ठण्डी सीटों पर सिकुड़े हुए बैठे हैं और कुछ लोग बीच में ही ईसा की तरह सलीब पर लटके हुए हैं—बाँहें पसारे, उनकी हथेलियों में कीलें नहीं, बस की बफीली चमकदार छड़ें हैं।

और ऐसे में दूर से एक अरथी सड़क पर चली आ रही है।

इस अरथी की खबर अखबार में है। मैंने अभी-अभी पढ़ी है। इसी मौत की खबर होगी। अखबार में छपा है—आज रात करोलबाग के मशहूर और लोकप्रिय बिजनेस मैन सेठ दीवानचन्द की मौत इरविन अस्पताल में हो गई। उनका शव कोठी पर ले आया गया है। कल सुबह नौ बजे उनकी अरथी आर्यसमाज रोड से होती हुई पंचकुइयाँ श्मशान-भूमि में दाह-संस्कार के लिए जाएगी।...

और इस वक्त सड़क पर आती हुई यह अरथी उन्हीं की होगी। कुछ लोग टोपियाँ लगाए और मफलर बाँधे हुए खामोशी से पीछे-पीछे आ रहे हैं। उनकी चाल बहुत धीमी है। कुछ दिखाई पड़ रहा है, कुछ नहीं दिखाई पड़ रहा है, पर मुझे ऐसा लगता है अरथी के पीछे कुछ आदमी हैं।

मेरे दरवाजे पर दस्तक होती है। मैं अखबार एक तरफ रखकर दरवाजा खोलता हूँ। अतुल मवानी सामने खड़ा है।

"यार, क्या मुसीबत है, आज कोई आयरन करने वाला भी नहीं आया, ज़रा अपना आयरन देना।" अतुल कहता है तो मुझे तसल्ली होती है। नहीं तो उसका चेहरा देखते ही मुझे खटका हुआ था कि कहीं शव-यात्रा में जाने का बवाल न खड़ा कर दे। मैं उसे फौरन आयरन दे देता हूँ और निश्चिन्त हो जाता हूँ कि अतुल अब अपनी पैण्ट पर लोहा करेगा और दूतावासों के चक्कर काटने के लिए निकल जाएगा।

जब से मैंने अखबार में सेठ दीवानचन्द की मौत की खबर पढ़ी थी, मुझे हर क्षण यही खटका लगा था कि कहीं कोई आकर इस सर्दी में शव के साथ जाने की बात न कह दे। बिल्डिंग के सभी लोग उनसे परिचित थे और सभी शरीफ, दुनियादार आदमी थे।

तभी सरदार जी का नौकर जीने से भड़भड़ाता हुआ आया और दरवाजा खोलकर बाहर जाने लगा। अपने मन को और सहारा देने के लिए मैंने उसे पुकारा, "धर्मा ! कहाँ जा रहा है ?"

"सरदार जी के लिए मक्खन लेने," उसने वहीं से जवाब दिया तो लगे हाथों लपककर मैंने भी अपनी सिगरेट मँगवाने के लिए उसे पैसे थमा दिए।

सरदार जी नाश्ते के लिए मक्खन मँगवा रहे हैं, इसका मतलब है वे भी शव-यात्रा में शामिल नहीं हो रहे हैं। मुझे कुछ और राहत मिली। जब अतुल मवानी और सरदार जी का इरादा शव-यात्रा में जाने का नहीं है तो मेरा कोई सवाल ही नहीं उठता। इन दोनों का या वासवानी-परिवार का ही सेठ दीवानचन्द के यहाँ ज्यादा आना-जाना था। मेरी तो चार-पाँच बार की मुलाकात-भर थी। अगर ये लोग ही शामिल नहीं हो रहे हैं तो मेरा सवाल ही नहीं उठता।

सामने बारजे पर मुझे मिसेज वासवानी दिखाई पड़ती है। उनके खूबसूरत चेहरे पर अजीब-सी सफेदी है और होंठों पर पिछली शाम की लिपस्टिक की हलकी लाली अभी भी मौजूद है। गाउन पहने हुए ही वह निकली हैं और अपना जूड़ा बाँध रही हैं। उनकी आवाज सुनाई पड़ती है, 'डार्लिंग, ज़रा मुझे पेस्ट देना, प्लीज़...'

मुझे और राहत मिलती है। इसका मतलब है कि मिस्टर वासवानी भी मैयत में शामिल नहीं हो रहे हैं।

दूर आर्यसमाज रोड पर वह अरथी बहुत आहिस्ता-आहिस्ता बढ़ती आ रही है...

अतुल मवानी मुझे आयरन लौटाने आता है। मैं आयरन लेकर दरवाजा बन्द कर लेना चाहता हूँ, पर वह भीतर आकर खड़ा हो जाता है और कहता है, "तुमने सुना, दीवानचन्द जी की कल मौत हो गई ?"

"मैंने अभी अखबार में पढ़ा है," मैं सीधा-सा जवाब देता हूँ, ताकि मौत की बात आगे न बढ़े। अतुल मवानी के चेहरे पर सफेदी झलक रही है, वह शेव कर चुका है। वह आगे कहता है, "बड़े भले आदमी थे दीवानचन्द।"

यह सुनकर मुझे लगता है कि अगर बात आगे बढ़ गई तो अभी शवयात्रा में शामिल होने की नैतिक जिम्मेदारी हो जाएगी, इसलिए मैं कहता हूँ, "तुम्हारे उस काम का क्या हुआ ?"

"बस, मशीन आने भर की देर है। आते ही अपना कमीशन तो खड़ा हो जाएगा। यह कमीशन का काम भी बड़ा बेहूदा है। पर किया क्या जाए ? आठ-दस मशीनें मेरे थ्रू निकल गईं तो अपना बिजनेस शुरू कर दूँगा।' अतुल मवानी कह रहा है, "भई, शुरू-शुरू में जब मैं यहाँ आया था तो दीवानचन्द जी ने बड़ी मदद की थी मेरी। उन्हीं की वजह से कुछ काम-धाम मिल गया था। लोग बहुत मानते थे उन्हें।"

फिर दीवानचन्द का नाम सुनते ही मेरे कान खड़े हो जाते हैं। तभी खिड़की से सरदार जी सिर निकालकर पूछने लगते हैं, "मिस्टर मवानी ! कितने बजे चलना है ?"

"वक्त तो नौ बजे का था, शायद सर्दी और कुहरे की वजह से कुछ देर हो जाए।" वह कह रहा है और मुझे लगता है कि यह बात शवयात्रा के बारे में ही है।

सरदार जी का नौकर धर्मा मुझे सिगरेट देकर जा चुका है और ऊपर मेज पर चाय लगा रहा है। तभी मिसेज वासवानी की आवाज सुनाई पड़ती है, "मेरे ख्याल से प्रमिला वहाँ जरूर पहुँचेगी, क्यों डार्लिंग ?"

"पहुँचना तो चाहिए।...तुम ज़रा जल्दी से तैयार हो जाओ।" कहते हुए मिस्टर वासवानी बारजे से गुजर गए हैं।

अतुल मुझसे पूछ रहा है, "शाम को कॉफी-हाउस की तरफ आना होगा ?"

"शायद चला आऊँ," कहते हुए मैं कम्बल लपेट लेता हूँ और वह वापस अपने कमरे में चला जाता है। आधी मिनिट बाद ही उसकी आवाज फिर आती है, "भई बिजली आ रही है ?"

"मैं जवाब दे देता हूँ, "हाँ, आ रही है, मैं जानता हूँ कि वह इलक्ट्रिक रॉड से पानी गरम कर रहा है, इसीलिए उसने यह पूछा है।"

"पॉलिश !" बूट-पॉलिशवाला लड़का हर रोज की तरह अदब से आवाज लगाता है और सरदार जी उसे ऊपर पुकार लेते हैं। लड़का बाहर बैठकर पॉलिश करने लगता है और वह अपने नौकर को हिदायतें दे रहे हैं, खाना ठीक एक बजे लेकर आना।...पापड़ भूनकर लाना और सलाद भी बना लेना।..."

मैं जानता हूँ, सरदार जी का नौकर पाजी है। वह कभी वक्त से खाना नहीं पहुँचाता और न उनके मन की चीजें ही पकाता है।

बाहर सड़क पर कुहरा अब भी घना है। सूरज की किरणों का पता नहीं है। कुलचे-छोलेवाले वैष्णव ने अपनी रेढ़ी लाकर खड़ी कर ली है। रोज की तरह वह प्लेटें सजा रहा है, उनकी

खनखनाहट की आवाज आ रही है।

सात नम्बर की बस छूट रही है। सूलियों पर लटके ईसा उसमें चले जा रहे हैं और क्यू में खड़े बाकी लोगों को कण्डक्टर पेशगी टिकिट बाँट रहा है। हर बार जब भी वह पैसे वापस करता है तो रेजगारी की खनक यहाँ तक आती है। धुंध में लिपटी रूहों के बीच काली वरदी वाला कण्डक्टर शैतान की तरह लग रहा है।

और अरथी अब कुछ और पास आ गई है।

"नीली साड़ी पहन लूँ ?" मिसेज वासवानी पूछ रही हैं।

वासवानी के जवाब देने की घुटी-घुटी आवाज से लग रहा है कि वह टाई की नॉट ठीक कर रहा है।

सरदार जी के नौकर ने उनका सूट ब्रुश से साफ करके हैंगर पर लटका दिया है। और सरदार जी शीशे के सामने खड़े पगड़ी बाँध रहे हैं।

अतुल मवानी फिर मेरे सामने से निकला है। पोर्टफोलियो उसके हाथ में है। पिछले महीने बनवाया हुआ सूट उसने पहन रखा है। उसके चेहरे पर ताजगी है और जूतों पर चमक। आते ही वह मुझसे पूछता है, "तुम नहीं चल रहे हो ?" और मैं जब तक पूछूँ कि कहाँ चलने को वह पूछ रहा है कि वह सरदार जी को आवाज लगाता है, "आइए, सरदारजी ! अब देर हो रही है। दस बज चुका है।"

दो मिनिट बाद ही सरदार जी तैयार होकर नीचे आते हैं कि वासवानी ऊपर से ही मवानी का सूट देखकर पूछता है, "ये सूट किधर सिलवाया ?"

"उधर खान मार्केट में।"

"बहुत अच्छी सिला है। टेलर का पता हमें भी देना।" फिर वह अपनी मिसेज को पुकारता है, "अब आ जाओ, डियर !...अच्छा मैं नीचे खड़ा हूँ तुम आओ।" कहता हुआ वह भी मवानी और सरदार जी के पास आ जाता है और सूट को हाथ लगाते हुए पूछता है, "लाइनिंग इण्डियन है।"

"इंग्लिश !"

"बहुत अच्छी फिटिंग है !" कहते हुए वह टेलर का पता डायरी में नोट करता है। मिसेज वासवानी बारजे पर दिखाई पड़ती हैं—नम और सर्द सुबह में उनका रूप और भी निखर आया है। सरदार जी धीरे से मवानी को आँख का इशारा करके सीटी बजाने लगते हैं।

अरथी अब सड़क पर ठीक मेरे कमरे के नीचे है। उसके साथ कुछेक आदमी हैं, एक-दो कारें भी हैं, जो धीरे-धीरे रेंग रही हैं। लोग बातों में मशगूल हैं।

मिसेज वासवानी जूड़े से फूल लगाते हुए नीचे उतरती हैं तो सरदारजी अपनी जेब का रूमाल ठीक करने लगते हैं। और इससे पहले कि वे लोग बाहर जाएँ वासवानी मुझसे पूछता है, "आप नहीं चल रहे ?"

"आप चलिए, मैं आ रहा हूँ," मैं कहता हूँ पर दूसरे ही क्षण मुझे लगता है कि उसने मुझसे कहाँ चलने को कहा है ? मैं अभी खड़ा सोच ही रहा हूँ कि वे चारों घर के बाहर हो जाते हैं।

अरथी कुछ और आगे निकल गई है। एक कार पीछे से आती है और अरथी के पास धीमी होती है। चलाने वाले साहब शव-यात्रा में पैदल चलने वाले एक आदमी से कुछ

बात करते हैं और कार सर्र से आगे बढ़ जाती है। अरथी के साथ पीछे जाने वाली दोनों कारें भी उसी कार के पीछे सरसराती हुई चली जाती हैं।

मिसेज वासवानी और वे तीनों लोग टैक्सी-स्टैण्ड की ओर जा रहे हैं। मैं उन्हें देखता रहता हूँ। मिसेज वासवानी ने फर-कालर डाल रखा है और शायद सरदार जी अपने चमड़े के दास्ताने उन्हें दे रहे हैं या दिखा रहे हैं। टैक्सी-ड्राइवर आगे बढ़कर दरवाजा खोलता है और वे चारों टैक्सी में बैठ जाते हैं। अब टैक्सी इधर ही आ रही है और उसमें से खिलखिलाने की आवाज मुझे सुनाई पड़ रही है। वासवानी आगे सड़क पर जाती अरथी की ओर इशारा करते हुए ड्राइवर को कुछ बता रहा है।...

मैं चुपचाप खड़ा सब देख रहा हूँ और अब न जाने क्यों मुझे मन में लग रहा है कि दीवानचन्द की शव-यात्रा में कम से कम मुझे तो शामिल हो ही जाना चाहिए था। उनके लड़के से मेरी खासी जान-पहचान है और ऐसे मौके पर तो दुश्मन का साथ भी दिया जाता है। सर्दी की वजह से मेरी हिम्मत टूट रही है...पर मन में कहीं शव-यात्रा में शामिल होने की बात भीतर-ही-भीतर कोंच रही है।

उन चारों की टैक्सी अरथी के पास धीमी होती है। मवानी गरदन निकालकर कुछ कहता है और दाहिने से रास्ता काटते हुए टैक्सी आगे बढ़ जाती है।

मुझे धक्का-सा लगता है और मैं ओवरकोट पहनकर, चप्पलें डालकर नीचे उतर आता हूँ। मुझे मेरे क़दम अपने-आप अरथी के पास पहुँचा देते हैं और मैं चुपचाप उसके पीछे-पीछे चलने लगता हूँ। चार आदमी कन्धा दिए हुए हैं और सात आदमी साथ चल रहे हैं—सातवाँ मैं ही हूँ। और मैं सोच रहा हूँ कि आदमी के मरते ही कितना फर्क पड़ जाता है ! पिछले साल ही दीवानचन्द ने अपनी लड़की की शादी की थी तो हजारों की भीड़ थी। कोठी के बाहर कारों की लाइन लगी हुई थी...

मैं अरथी के साथ-साथ लिंक रोड पर पहुँच चुका हूँ। अगले मोड़ पर ही पंचकुइयाँ शमशान-भूमि है।

और जैसे अरथी मोड़ पर घूमती है लोगों की भीड़ और कारों की क़तार मुझे दिखाई देने लगती है। कुछ स्कूटर भी खड़े हैं। औरतों की भीड़ एक तरफ खड़ी है। उनकी बातों की ऊँची ध्वनियाँ सुनाई पड़ रही हैं। उनके खड़े होने में वही लचक है जो कनॉटप्लेस में दिखाई पड़ती है। सभी के जूड़ों के स्टाइल अलग-अलग हैं। मरदों की भीड़ से सिगरेट का धुआँ उठ-उठकर कूहरे में घुला जा रहा है और बात करती हुई औरतों के लाल-लाल होंठ और सफेद दाँत चमक रहे हैं और उनकी आँखों में एक गरूर है...

अरथी को बाहर बने चबूतरे पर रख दिया गया है। अब खामोशी छा गई है। इधर-उधर बिखरी हुई भीड़ शव के इर्द-गिर्द जमा हो गई है और कारों के शोफर हाथों में फूलों के गुलदस्ते और मालाएँ लिये अपनी मालकिनों की नजरों का इंतजार कर रहे हैं।

मेरी नजर वासवानी पर पड़ती है। वह अपनी मिसेज को आँख के इशारे से शव के पास जाने को कह रहा है और वह है कि एक औरत के साथ खड़ी बात कर रही है। सरदार जी और अतुल मवानी भी वहीं खड़े हुए हैं।

शव का मुँह खोल दिया गया है और अब औरतें फूल और मालाएँ उसके इर्द-गिर्द रखती जा रही हैं। शोफर खाली होकर अब कारों के पास खड़े सिगरेट पी रहे हैं।

एक महिला माला रखकर कोट की जेब से रूमाल निकालती है और आँखों पर रखकर नाक सुरसुराने लगती है और पीछे हट आती है।

और अब सभी औरतों ने रूमाल निकाल लिए हैं। और उनकी नाकों से आवाजें आ रही हैं।

कुछ आदमियों ने अगरबत्तियाँ जलाकर शव के सिरहाने रख दी हैं। वे निश्चल खड़े हैं।

आवाजों से लग रहा है कि औरतों के दिल को ज्यादा सदमा पहुँचा है।

अतुल मवानी अपने पोर्टफोलियो से कोई कागज निकालकर वासवानी को दिखा रहा है। मेरे ख्याल से वह पासपोर्ट का फॉर्म है।

अब शव को भीतर शमशान-भूमि में ले जाया जा रहा है। भीड़ फाटक के बाहर खड़ी देख रही है। शोफरों ने सिगरेटें या तो पी ली हैं या बुझा दी हैं और वे अपनी-अपनी कारों के पास तैनात हैं।

शव अब भीतर पहुँच चुका है।

मातमपुरसी के लिए आए हुए आदमी और औरतें अब बाहर की तरफ लौट रहे हैं।

कारों के दरवाजे खुलने और बन्द होने की आवाजें आ रही हैं। स्कूटर स्टार्ट हो रहे हैं और कुछ लोग रिंग रोड, बस-स्टाप की ओर बढ़ रहे हैं।

कुहरा अभी भी घना है। सड़क से बसें गुजर रही हैं और मिसेज वासवानी कह रही हैं, "प्रमिला ने शाम को बुलाया है, चलोगे न, डियर ? कार आ जाएगी। ठीक है न ?"

वासवानी स्वीकृति में सिर हिला रहा है।

कारों में जाती हुई औरतें मुसकराते हुए एक-दूसरे से विदा ले रही हैं। और बाई-बाई की कुछ-एक आवाजें आ रही हैं। कारें स्टार्ट होकर जा रही हैं।

अतुल मवानी और सरदार जी भी रिंग रोड, बस-स्टाप की ओर बढ़ गए हैं और मैं खड़ा सोच रहा हूँ कि अगर मैं भी तैयार होकर आया होता तो यहीं से सीधा काम पर निकल जाता। लेकिन अब तो साढ़े ग्यारह बज चुके हैं।

चिता में आग लगा दी गई है और चार-पाँच आदमी पेड़ के नीचे पड़ी बेंच पर बैठे हुए हैं। मेरी तरह वे भी यूँ ही चले आए हैं। उन्होंने जरूर छुट्टी ले रखी होगी, नहीं तो वे भी तैयार होकर आते।

मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि घर जाकर तैयार होकर दफ्तर जाऊँ या अब एक मौत का बहाना बनाकर आज की छुट्टी ले लूँ—आखिर मौत तो हुई ही है और मैं शव-यात्रा में शामिल भी हुआ हूँ।

(दिल्ली 1963)

फटे पाल की नाव

उनकी बैठक में कुछ लोग आते-जाते थे। कुछ तो राजनीति की खबरें लेने आते और कुछ मौज के लिए। वैसे उनका नाम कुछ और था, पर वे सदानन्द के नाम से ही जाने जाते थे। घर क्या था, तपस्वी का डेरा लगता था और अधेड़ सदानन्द की प्रतिष्ठा और सम्मान भी काफी था—क्योंकि नगर के लोग उनकी सेवाओं को भूले नहीं थे। राष्ट्रीय जागरण के काल में ही वे गुरुकुल से वापस आए थे और गाँधीजी की पुकार पर आंदोलन में कूद पड़े